द मैजिक ऑफ यू

ऋतु खोडा



स्कूलों में कला अक्सर एक वैकल्पिक विषय होता है, जबकि यह एक मज़ेदार और आनन्द का विषय होने के साथ-साथ एक ऐसी विधा है जिससे बच्चे भावनात्मक, सामाजिक, और आर्थिक रूप से भी समर्थ बन सकते हैं। कला की शिक्षा सिर्फ बेहतर कलाकारों को विकसित करने के लिए नहीं होनी चाहिए बल्कि पाठ्यक्रम के अन्य विषयों की तरह इसकी हर उम्र और स्तर पर महत्वपूर्ण भूमिका है।

'आर्ट फर्स्ट फाउण्डेशन' संस्था मुम्बई के छः म्युनिसिपल स्कूलों के साथ काम करती है जहाँ श्रवण और बौद्धिक क्षमता से बाधित यानी 'अन्यथा-सक्षम' बच्चों के साथ कला की कार्यशालाएँ की जाती हैं। सिर्फ बच्चों को ही नहीं, शिक्षकों को भी इन कार्यशालाओं में मज़ा आता है और बहुत कुछ सीखने को मिलता है। इस लेख में प्रायमरी और प्री-प्रायमरी बच्चों के साथ कार्यशाला में हुए अनुभवों को विभिन्न कलाकार आपके साथ बाँट रहे हैं।

अपने चारों ओर लोगों पर नज़र डालिए। आप सबसे पहले किस चीज़ पर गौर करते हैं? लोगों के बारे में सबसे पहली बात जो आपका ध्यान आकर्षित करती है, वो है उनके चेहरे। यह थोड़ा आश्चर्यजनक भी है पर साथ ही सच भी। दो आँखों, एक नाक और एक मुँह से बना यह चेहरा, कितना कुछ कहता है! बहुतों का मानना है कि चेहरा इन्सान की सोच, व्यक्तित्व, और निःसन्देह उसकी आत्मा तक का आईना होता है। प्रसिद्ध फ्रेंच चित्रकार पॉल गॉगें ने जब अपने दोस्त विंसेंट वैन गोह (प्रसिद्ध डच चित्रकार) का चित्र बनाकर दिखाया तो वैन गोह का जवाब काफी रोचक थाः "निश्चित तौर पर यह मैं ही हूँ। पर वो वाला 'मैं' जो पागल हो गया है।"*

चित्रकारी की ओर पहलकदमी

स्वयं की चित्रकारी करना कला की सबसे अन्तरंग विधा है क्योंकि आप गहराई से अपना अवलोकन कर रहे हैं और खुद के बारे में जो राय है वो दूसरों के साथ साझा कर रहे हैं। और यही वो गतिविधि है जिसे हमने एनएमएमसी-ईटीसी (नवी मुम्बई म्युनिसिपल कॉर्पोरेशन) - द्वारा 'अन्यथा-सक्षम' बच्चों के लिए संचालित शिक्षण एवं प्रशिक्षण केन्द्र में बच्चों के साथ करने का प्रयास किया।



डाली

जिस प्रकार दो स्नो-फ्लेक एक से नहीं होते, दो लोगों के उँगलियों के निशान एक से नहीं होते, ठीक उसी प्रकार इन बच्चों की तरह दुनिया में और कोई दूसरा नहीं है। ये जोश से भरे, खूबसूरत और बहुत ही प्यारे हैं। उनके सोचने का तरीका और उनकी पसन्द की चीज़ें उन्हें ऐसा बनाती हैं। ये विशेष और अनुपम हैं। खुदा की अनोखी नेमत हैं।

हमने बच्चों के साथ 'मैजिक ऑफ यू' का एक सत्र करने की सोची। कई अन्य कलाकारों की ही तरह जो अपनी ही तस्वीर उकेरने को उतावले होते हैं, ये बच्चे भी अपना पोर्ट्रेट बनाने को लेकर उतने ही रोमांचित थे। उन्हें

*वैन गोह अक्सर मानसिक बीमारी के शिकार रहते थे।

प्रेरित किया गया खुद की ऐसी बातें सोचने के लिए जिन्हें वे वाकई पसन्द करते हैं। साथ ही अपनी शारीरिक विशेषताओं पर ध्यान केन्द्रित कर उन विशेषताओं को मुख्य रूप से उभारने के लिए, जो उनके चरित्र को औरों से अलग और अनूठा बनाती हैं - प्रख्यात व सनकी स्पेनिश कलाकार डाली की तरह जिनकी बहुत ही विशिष्ट ऊपर की ओर घूमी हुई मूँछें उनकी पहचान थीं।

हमने इन बच्चों के साथ एक छोटी -सी कार्यशाला रखी जिसमें एक कलाकार ने बच्चों से अपनी टेढ़ी-मेढ़ी नाक और ऊपर मुड़ी हुई मूँछों के बारे में बताया और साथ ही यह भी बयान किया कि वे अपने बारे में क्या सोचते हैं। उन्होंने खुद को आईने में निहारते हुए अपना चित्र भी बनाया। गम्भीर चेहरा, गुस्से वाला चेहरा, तुड़े-मुड़े मनोभावों वाला चेहरा और फिर उनसे बनती मुस्कान वाला चेहरा भी बनाया। कमरा न सिर्फ बच्चों की हँसी से खिलखिला उठा बल्कि उन्होंने कलाकार को स्नेह से गले भी लगाया।

पेंसिल का हुनर जानते हैं वो

हर एक बच्चे को अपना चेहरा देखने के लिए आईना दिया गया ताकि वे आईने में खुद को एक-टक निहार सकें, अलग-अलग चेहरे बना सकें, अपनी मुस्कान देख सकें, खुद को



आइने में देखकर खुद के चित्र बनाते बच्चे

बात करते हुए देख सकें, अपनी आँखों को भैंगा-कर देख सकें। वो सब करके देखें जिस भी प्रकार वे खुद को देखना और दिखाना चाहते हैं, अपने विचारों को बेहतर अभिव्यक्त करना चाहते हैं।

शुरुआत में हम थोड़ा डरे हुए थे क्योंकि पोर्ट्रेट शब्द यथार्थ की माँग करता है, पर हम बच्चों की स्वाभाविकता और सहजता में रुकावट नहीं डालना चाहते थे। एक्टिविटी शुरू होने पर हम यह देखकर काफी खुश और आश्चर्यचकित थे कि बच्चे किसी पचड़े में पड़े बगैर बहुत ही सच्चाई और मासूमियत के साथ बातें कर रहे थे और बातों का जवाब भी दे रहे थे।

एक बच्चा अपने चेहरे को आईने में 20 मिनट से निहार रहा था। मैं डर-सी गई कि शायद बच्चा यह नहीं समझ पाया कि वास्तव में उससे क्या अपेक्षा की जा रही है पर तभी मैंने देखा कि वह अपनी मूँछों को ध्यान से देख रहा है और फिर उसने धीरे-धीरे उन्हें अपने कागज़ पर उकेरना शुरू कर दिया। उसने पेंसिल को बहुत ही हल्के हाथ से पकड़ रखा था। कलाकार शिक्षक, कुन्दन ने उसे पेंसिल को थोड़ा मज़बूती से पकड़ने की सलाह दी, साथ ही कहा कि बोल्ड स्ट्रोक्स के लिए ऐसा करना बेहतर होगा। लड़के ने तुरन्त ही जवाब दिया, “सर, मेरी मूँछें तो अभी बस आ ही रही हैं इसलिए बहुत पतली हैं। अगर ऐसे में मैं पेंसिल को थोड़ा ज़ोर से पकडूँगा तो ये लकीरें मोटी हो जाएँगी और मैं इन्हें, ये जैसी हैं वैसी नहीं बना पाऊँगा।





इसीलिए मैं इसे थोड़ा दूर से ही पकड़ रहा हूँ।" कला ने इन बच्चों को रास्ता दिया जो वे सोचते हैं, व्यक्त करने का।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

नवी मुम्बई म्युनिसिपल कॉर्पोरेशन की 'अन्यथा-सक्षम' बच्चों के एजुकेशन एण्ड ट्रेनिंग सेंटर (ईटीसी) में पढ़ाने वाली, बिन्दिया काम्बले, बच्चों की तत्परता को देखकर सुखद आश्चर्य से भर गईं। उन्होंने समझा कि बच्चों को और बेहतर जानने के लिए उन्हें स्वयं को अभिव्यक्त करने का स्वतंत्र मौका देना होगा ताकि वे अपनी दुनिया की छान-बीन कर सकें। बच्चों के लिए यह एक ऐसा अवसर था जहाँ वे अपने अनोखेपन को कला के ज़रिए अभिव्यक्त कर सकते थे और साथ ही उन्हें अपने आपको खुशी एवं गर्व के साथ प्रकट करने की स्वतंत्रता थी।

सभी बच्चों ने गम्भीरता से काम शुरू किया। स्वयं से प्रेरित हो बच्चे काफी देर तक खुद का अवलोकन करने और हाव-भाव का अभ्यास करने के गहन सत्र के बाद अब अपने जादू को कागज़ पर उतारने को तैयार थे। वे आत्मविश्वास से भरे थे और हम पर कुछ खास आश्रित भी नहीं थे। सत्र में अब तक उन्होंने शायद ही कभी हमसे कोई मदद ली हो।

भास्कर ने महसूस किया कि बच्चों को अपनी सोच और कलात्मकता को निखारने के लिए स्वतंत्रता देनी चाहिए और इसके लिए हमें अपनी ढाँचागत शिक्षण पद्धति से बाहर निकलना होगा। इसके चलते ही हमने खुली पद्धति को अपनाया ताकि बच्चे कला-निर्माण की प्रक्रिया का आनन्द उठा सकें बजाय इसके कि सही परिणाम की चाहत में वे सीमित हो जाएँ। यह ज़रूरी था कि हम उनकी कलात्मक प्रतिभाओं को निखार सकें तथा उनकी अपनी क्षमताओं में विश्वास को बरकरार रख सकें।

खुद को कागज़ पर उतारते बच्चे

कुछ बच्चे आईनों में देखते हुए अलग-अलग तरह के चेहरे बनाने में इतने व्यस्त थे कि वे महज़ अपने चेहरे का अवलोकन करना चाहते थे और उसे चित्रित करने की उनकी कोई खास इच्छा ही न थी। हमें यह महसूस हुआ कि ये बच्चे कुछ ज़्यादा ही संवेदनशील हैं और अधिक गहराई में जाकर खुद को समझने की क्षमता रखते हैं। भास्कर के मामले में तो कला की भूमिका स्पष्ट थी। वे चाहते थे कि कला के ज़रिए एक ऐसा मंच तैयार किया जाए जिस पर बच्चे अपनी भावनाएँ चित्रों या फिर कला के अन्य स्वरूपों जैसे ड्रामा, थिएटर या संगीत के रूप में व्यक्त कर सकें।

बच्चों ने जल्द ही यह भाँप लिया था कि ऐसी कई सारी चीज़ें और बातें हो सकती हैं जो उन्हें वास्तव में उनका रूप और पहचान प्रदान करती हैं। जैसे, उनका पहनावा, वो जैसे दिखते





हैं, वे बातें जो उन्हें हँसाती या रुलाती हैं, चीज़ें जो उन्हें प्यारी हैं, चीज़ें जिन्हें वे नापसन्द करते हैं। हमने पाया कि ये बच्चे खुले स्वभाव के थे और बातों को और अधिक स्पष्ट करने के लिए सवाल पूछ रहे थे। इस मामले में इनमें आत्मविश्वास तो है पर नई सीमाओं को पार करने में कम हिचकिचाहट होती है।

वैसे तो ये बच्चे आम तौर पर अपने विचारों के आदान-प्रदान और उन पर बातें करने में दिलचस्पी नहीं लेते थे पर जब हमने उनका काम देखा और इसके बारे में कुछ जानना चाहा, और इस बारे में उनके तर्क सुने तो हम हैरान थे। पवन, अपने चेहरे को सफेद रंग से रंग रहा था। हमें लगा कि शायद उसे रंगों को मिलाने में हमारी मदद की ज़रूरत हो पर जब उसने ट्यूब लाइट और आईने में उससे परावर्तित हो रहे प्रकाश की ओर इशारा किया तो हम समझ गए कि वो चेहरे पर पड़ रहे परावर्तित प्रकाश को उकेर रहा है। बच्चे ने हमारी ओर मुस्कान बिखेरी और वापस अपने काम पर लग गया। उसकी मुस्कान जैसे 'डू नॉट डिस्टर्ब' का प्रतीक थी हमारे लिए।

छवियाँ

खुलकर खेलने की छूट, बिना किसी दिशानिर्देश के खोजबीन करने की स्वतंत्रता ने इन बच्चों को स्वयं को खुलकर अभिव्यक्त करने में मदद की। अगर इस तरह के प्रयास लगातार किए जा सकें तो इसकी मदद से बच्चे स्वयं को अभिव्यक्त करने की एक नई

भाषा विकसित कर सकते हैं जो आगे उनके सामाजिक और भावनात्मक विकास के लिए लम्बे समय तक काम आएगी।

ईटीसी शिक्षिका बिन्दिया का भी कुछ ऐसा ही मानना है कि इस तरह की बातचीत बच्चों के भाषा निर्माण में एक महत्वपूर्ण ज़रिया हो सकती है। हम बच्चों को एक कहानी सुना दें और उन्हें उस पर चित्र बनाने को कहें, यह उन्हें अपनी भाषा गढ़ने में मदद करेगा।

हमारा मानना है कि बेहतर कलाकारों को विकसित करने के लिए आर्ट एजुकेशन की ज़रूरत नहीं है। इसके और महत्वपूर्ण कारण हैं। ईटीसी की शिक्षिका मनीषा गामे का कहना है कि कला के ज़रिए बच्चे अपनी भावनाओं और विचारों को अभिव्यक्त कर सकेंगे और साथ ही वे अपने विचारों को भाषा में भी ला सकेंगे।

सीधे शब्दों में कहें तो कला वह माध्यम है जिसके ज़रिए इन्सान खुद से तथा एक-दूसरे से बात करता है। यह हमारी सभ्यता की भाषा है जिसके ज़रिए हम अपना डर, चिन्ताएँ, जिज्ञासा, भूख, खोज और अपनी उम्मीदों को व्यक्त कर सकते हैं।

इसीलिए ज़रूरत है कला शिक्षा को मुख्य पाठ्यक्रम में शामिल करने की ताकि हर बच्चा चाहे वो सक्षम हो या नहीं, उसकी रचनात्मक सोच के कौशल को विकसित किया जा सके। सभी बच्चों के पास इस बात के पर्याप्त मौके होने चाहिए जिससे वे कला की भाषा के साथ अपनापन बना सकें और कला की दुनिया में प्रवेश कर अपने भ्रमण का रास्ता तय कर सकें।

ऋतु खोडाः 'आर्ट फर्स्ट फाउण्डेशन' की संस्थापक हैं। कला को समाज में और प्रासंगिक बनाना इन आईआईएम कोलकाता की स्नातक का मकसद है। इनका मानना है कि कला वह भाषा है जो बच्चों और बड़ों, दोनों में जोश भरती है। इनका काम आर्थिक रूप से कमज़ोर स्कूलों में बच्चों के लिए सोचने और करने की स्वतंत्रता दिलाने में मदद करना है।
अँग्रेज़ी से अनुवादः अम्बरीष सोनीः 'संदर्भ' पत्रिका से सम्बद्ध हैं।

